शुंग कालीन धार्मिक जीवन

–दलजीत एवं प्रो. उपमा वर्मा*
शोधार्थी : प्राचीन इतिहास
*प्रो. एवं अध्यक्ष : प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग
का.सु. साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय अयोध्या

शुंग राजाओं का शासन काल वैदिक या ब्राह्मण धर्म के पुनर्जागरण का काल माना जाता है। मौर्य काल की समाप्ति और शुंग वंश की स्थापना के साथ ही सर्वप्रथम राजनीतिक परिवर्तन के साथ ही धार्मिक परिवर्तन हुआ। पाणिनि ने शुंगों को भारद्वाज गोत्र का ब्राह्मण बतलाया है। डॉ. के. पी. जायसवाल भी इस मत से सहमत हैं।[1] उनके अनुसार शुंग ब्राह्मण थे और धार्मिक जगत में उनका प्रभुत्व अधिक था। इस काल में ब्राह्मण धर्म को राजकीय संरक्षण मिलने से वैदिक धर्म एवं यज्ञों की प्रभुता स्थापित हो गयी। ब्राह्मण धर्म के अनुसार देवी–देवताओं की उपासना शुंग शासन काल में बड़ी दृढ़ता के साथ किया जाने लगा। ब्राह्मण को वैदिक धर्म का विशेषज्ञ माना जाता था इसीलिए वे धार्मिक कार्यो के केन्द्र बन गये।[2] उपनिषद् की रचना (लगभग 800 से 400 ई. पूर्व) के तत्काल बाद ब्राह्मण धर्म ने अपना अभिलाक्षणिक रूप ग्रहण कर लिया था।[3] लेकिन सैद्धान्तिक दृष्टि से वैदिक धर्म को इसका आधार कहा जाता था, परन्तु एक लम्बे और निरन्तर विकासमान सांस्कृतिक सम्मिश्रण का यह एक कारण मात्र था। वैदिक या ब्राह्मण धर्म असंख्य धार्मिक विश्वासों, पन्थों, रिवाजों तथा कर्मकाण्डों का समुच्चय है। दो प्रमुख वैदिक देवताओं विष्णु और नारायण को माना जाता है।

शुंगो ने वैदिक यज्ञों को प्रतिष्ठित करते हुए दो अश्वमेश यज्ञों का आयोजन किया। अयोध्या के शिलालेख बताते है कि शासक पुष्यमित्र द्वारा दो अश्वमेध यज्ञ किया गया मालविकाग्निमित्रम् में वर्णित अश्वमेधं उसने अपने शासन के अन्तिम दिनों में किया था। महाभाष्य के कर्त्ता पतन्जलि उसके पुरोहित थे।[4] महाभाष्य में लिखा गया है कि–इह पुष्यमित्रम यजामहे अर्थात हम पुष्यमित्र के लिए यज्ञ करते हैं। प्रश्न यह है कि प्रथम अश्वमेध यज्ञ के बारे में निश्चित समय की जानकारी नहीं है। सम्भवतः यह यज्ञ पुष्यमित्र के राज्य ग्रहण करने या पाटलिपुत्र को यवनों से मुक्त कराने के अवसर पर किया गया। मौर्यों द्वारा बौद्ध धर्म को संरक्षण दिया जाता था जो उसके विरुद्ध थे उन ब्राह्मणों का पुष्यमित्र नेता था।[5] ऐसा माना जाता है कि बौद्ध धर्म ब्राह्मण विरोधी थे इसीलिए शुंग शासकों ने इस का विरोध किया, जो ब्राह्मण धर्म के पुनरुत्थान के लिए काम कर रहे थे उसके साथ पुष्यमित्र शुंग था।

द्वितीय अश्वमेध यज्ञ का वर्णन 'मालविकाग्निमित्रम्' में मिलता है। जिसमें कहा गया है कि मेरी प्रार्थना है कि तुम स्वस्थ हो। यज्ञ वेदि से सेनापति पुष्यमित्र विदिशा में स्थिति अपने पुत्र को संदेश भेजा है कि तुम्हें मालूम हो कि मैंने राजसूय यज्ञ करने के बाद एक अश्व को सभी बाधाओं से मुक्त करके छोड़ा है। इस अश्व को एक वर्ष बाद आना था इसलिए मैंने एक सौ राजपूतों सहित वसुमित्र को इसकी रक्षा के लिए नियुक्त किया है। सिन्धु नदी के बायें किनारे तट पर विचरण करते हुए इस अश्व को यवनों द्वारा पकड़ लिया गया था, जिससे दोनों पक्षों में भीषण युद्ध हुआ। उस युद्ध में वीर्य धनुर्धर वसुमित्र ने शत्रुओं को पराजित किया उसके बाद अश्व को उसने छीन लिया। अब मैं पौत्र द्वारा वापस लाये गये अश्व की बलि दूँगा। यह बलि उसी प्रकार होगा जिस प्रकार अंशुमत ने सागर को अश्व वापस लाकर दिया था। अब तुम क्रोध को छोड़ते हुए मेरी पुत्र–बन्धुओं सहित यज्ञ देखने के लिए यहाँ चले आइए।[6] डोसन ने अश्वमेघ यज्ञ का वर्णन करते हुए कहा है कि ''एक विशेष वर्ग का अश्व कुछ संस्कारों द्वारा पवित्र करके एक वर्ष तक विचरण करने के लिए छोड़ दिया जाता है स्वयं सम्राट या उसका एक प्रतिनिधि सेना सहित घोड़े के साथ चलता है। यदि वह घोड़ा किसी विदेशी राज्य में घुस जाता है तो विदेशी राजा को उसकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ती है यदि वह ऐसा न माने तो उसे

युद्ध करना पड़ता है। अश्वमेध घोड़े को छोड़ने वाला राजा यदि उन सभी राजाओं को जिनके राज्य क्षेत्र में घोड़ा जाता है अधीनता मानने के लिए विवश कर लेता तो वह अपने अधीनस्थ राजाओं के साथ गौरव से लौटता था। परन्तु यदि वह इस कार्य में असफल रहता है तो उसका निरादर किया जाता था। इस प्रकार उसकी अनाधिकार चेष्टा का परिह्नास किया जाता था। उसके सफल होकर लौटने पर एक भव्य महोत्सव का आयोजन किया जाता था। इस महोत्सव में घोड़े की बलि भी दी जाती थी।''[7]

शुंग काल में भारतीय समाज में विदेशी जातियों के शामिल होने के प्रमाण भी मिलते हैं। इन जातियों ने वैदिक धर्म को स्वीकार किया है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण हेलियोडोरस का बेस नगर (विदिशा) का गरूड़ ध्वज (स्तम्भ) है। जिसमें उसने स्वयं की भागवत धर्म में आस्था प्रकट की है।[8] इससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय भागवत धर्म प्रसिद्ध हो चुका था। शुंगकाल में विदेशी जातियों ने ब्राह्मण एवं बौद्ध धर्म में स्वयं को दीक्षित किया। वैष्णव धर्म को अपनाते हुए शक क्षत्रप रुद्रदामन ने ब्राह्मण धर्म में अपनी आस्था प्रकट की।[9] ब्राह्मण धर्म का इतिहास काफी पुराना है। रामायण एवं महाभारत में इसके प्रमाण मिलते हैं।[10]

बाल्मीकि को महान ग्रंथ रामायण का रचयिता माना जाता है इसकी रचना लगभग 500 ई. पूर्व मानी जाती है।[11] लेखन की दो–तीन सदियों पश्चात् यह वर्तमान रूप में आया, किंतु आज इसके कई पाठांतर मौजूद हैं।

इसके सात मंडलों में प्रथम तथा अंतिम सबसे परवर्ती हैं। प्रथम मंडल में राम को विष्णु का अवतार माने जाने से इसके बाद में लिखे जाने का पता चलता है, किंतु कथाएं काफी पुरानी हैं जिनमें से कुछ का संबंध मगध तथा कोसल जनपदों से है।

महाभारतः मूलतः 'जय संहिता' नाम से ज्ञात महाभारत में हरिवंश पुराण (हरि अथवा विष्णु की वंशावली) तथा भगवद् गीता (ईश्वर का गीत) शामिल है। परंपरानुसार यह कृष्ण द्वैपायन अथवा व्यास द्वारा रचित है।[12] इसे पूरा होने में कई सदियां लगीं। यद्यपि भगवद्गीता एवं अन्य क्षेपक बाद में जोड़े गए, परंतु मुख्य हिस्से का अंतिम संकलन तीसरी या दूसरी सदी ई० पू० तक हो चुका था।

महाभारत में वर्णित महान युद्ध का ऐतिहासिक आधार संभवतः 9वीं सदी ई०पू० में उत्तर भारत में हुआ एक युद्ध है। ऐसा माना जाता है कि महाभारत का यह युद्ध करूक्षेत्र में हुआ था जो इस समय हरियाणा में है।[13]

इसके 18 खंड हैं। इसके परिशिष्ट हरिवंश के तीन हिस्से हैं जिनमें सृजत यादवों की वंशावली, मिथकों, रोमांचक कार्यों तथा कृष्ण एवं गोपियों के प्रेम का वर्णन है। महाभारत का हिस्सा होने के दावे के बावजूद ये काफी बाद में रचित हैं तथा शैली में लोकप्रिय पुराणों के समकक्ष हैं।[14]

गीता में देवकी नंदन कृष्ण के विचार है तथा यह घोषणा है कि धर्म–परायण सदाचार यज्ञकर्ता पुरोहितों को दान देने से ज्यादा प्रभावी है।[15]

वर्ण शब्द वृञ् वरणे से उत्पन्न हुआ है। इस का अर्थ होता है वरण करना या चुनना। इससे यह आभास होता है कि वर्ण से तात्पर्य किसी विशेष व्यवसाय को चुनने या अपनाने से है। वर्ण उस वर्ग का सूचक शब्द प्रतीत होता है जिसका समाज में विशिष्ट कार्य या व्यवसाय है और इस विशेषता के कारण वह समाज में एक वर्ण के रूप में प्रतिष्ठित है। भागवत में कहा गया है कि सृष्टि के प्रारम्भ में सभी मनुष्यों का केवल एक वर्ण था जिसे हंसवर्ण कहा जाता था, बाद में स्वभाव परिवर्तन के कारण चार वर्णों का जन्म हुआ।[16] वर्णों की उत्पत्ति का ऐतिहासिक अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि वर्णों की उत्पत्ति जन्म या कर्म दोनों से मानी गयी है। प्रारम्भ में कभी दो वर्ण थे– आर्य और अनार्य। आर्यों ने आर्यत्व और अनार्य भेद को बनाये रखने के लिए वर्ण व्यवस्था की योजना बनायी।[17] इसका आधार जन्म और कर्म दोनों था। जिस वंश या समूह में जो जन्म लेता था उसी समूह का सदस्य उसे

माना गया। इसके पश्चात् कर्तव्यों का निर्धारण किया गया। इस प्रकार आर्य और अनार्य दो समूहों का जन्म हुआ। आर्य वर्ग में जन्म लेने वाले को द्विज तथा अनार्य वर्ग में जन्म लेने वाले को दास अथवा शूद्र कहा गया।[18]

वर्ण की उत्पत्ति के बारे में भगवद्गीता में कहा गया है कि मैंने गुण और कर्म के आधार पर चारों वर्णों की सृष्टि की है। गुण के अन्तर्गत सत्व, रज और तम तीनों गुण आते हैं। सत्वगुण सुख, रजोगुण कर्म और तमोगुण अज्ञान का कारण है। मनुष्य किसी न किसी गुण से प्रभावित होता है।[19] विष्णुपुराण में ऋग्वेद के उल्लेख की पुष्टि करते हुए कहा गया है कि ब्रह्मा ने सर्वप्रथम सत्वगुण सम्पन्न ब्राह्मणों को मुख से, रजोगुण प्रधान क्षत्रियों को वक्ष स्थल से, रजोगुण और तमोगुण युक्त वैश्यों को जंघा से और तमोगुण प्रधान शूद्रों को चरण से उद्भूत किया।[20] इस प्रकार वर्ण व्यवस्था कर्म पर आधारित थी। महाभारत में भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं कि वर्ण व्यवस्था में यदा–कदा जन्म के स्थान पर कर्म को महत्त्व प्रदान किया गया है।

समाज में शूद्र वर्ण की स्थिति निम्नतम थी। शूद्र पतित माने जाते थे और उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता था। अधिकार एवं प्रतिष्ठा की दृष्टि से उच्च वर्ण की तुलना में ये निम्न माने जाते थे। शूद्रों की तुलना पशुओं से की गयी थी। जिस प्रकार शरीर का सम्पूर्ण भार पैरों पर होता है उसी प्रकार शूद्र वर्ण पर समाज की सेवा का पूरा भार था। मनु के अनुसार तीनों वर्णों की सेवा करना यही एक कर्म ईश्वर ने शूद्रों के लिए बनाया हैं शूद्र पूरी तरह से स्वामी पर निर्भर होते थे उनका अपना कोई धन नहीं होता था।[21]

मेगस्थनीज ने इण्डिका में लिखा है कि ब्राह्मण तथा श्रमण प्रधान धार्मिक पंथ थे। उसने ब्राह्मणों को महत्त्व देते हुए उसकी तुलना पाइथोगोरस और प्लेटो से की है। उनके अनुसार ब्राह्मण सम्पूर्ण जगत् को अण्डाकार, विनाशवान तथा ब्रह्ममय मानते हुए पंचत्व की सत्ता में विश्वास रखते थे।[22] अतः यह स्पष्ट होता है कि मेगस्थनीज ने वैदिक धर्म के सिद्धान्तों को ब्राह्मण धर्म माना है। इस समय वैदिक यज्ञों का पुनः काफी प्रचार तथा सम्पादन होने लगा था। मेगस्थनीज के अनुसार, 'यज्ञो तथा श्राद्धों में कोई भी मुकुट धारण नहीं करता।' गृहस्थ लोग बलि देने के लिए ब्राह्मणों को नियुक्त करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि सामान्य जनता तथा उच्च वर्ग के लोग यज्ञ, हवन, बलिपूजा तथा अन्य धार्मिक कार्य ब्राह्मणों से करवाते थे। अतः हम कह सकते हैं कि शुंगकाल में वैदिक धर्म पुनः अपनी जड़ें जमा रहा है। कर्मकाण्ड जटिल प्रक्रिया है। ब्राह्मणों द्वारा ही यह सफल हो सकता है।

मेगस्थनीज ने शिव तथा कृष्ण, कौटिल्य ने अपराजित, अप्रतिहत, शिव, वैश्रवण, अश्वनि, श्रीजयन्त तथा वैजयन्त तथा पाणिनि ने वासुदेव आदि देवताओं की उपासना किये जाने का उल्लेख किया है। इस काल में बहुदेववाद की विशेषता यह थी कि देवताओं की एक कम महत्त्व की श्रेणी बन गयी थी।[23] इस श्रेणी में बलि, नारद, नाग आदि देवता थे। इस काल में मूर्ति पूजा का भी प्रचलन था। पातंजलि के महाभाष्य से पता चलता है कि इस समय देवताओं की मूर्तियों को बेचा जाता था।[24] इन मूर्तियों को बनाने वाले शिल्पियों को देवताकार या मूर्तिकार कहा जाता था। देव प्रतिमाओं का प्रतिष्ठापन मन्दिर में ही किया जाता था। हिन्दू मान्यता के अनुसार लोग तीर्थयात्रा तथा पवित्र नदियों में स्नान आदि करते थे। वर्णाश्रम धर्म का विशेष महत्व था। कौटिल्य द्वारा वृद्धावस्था में संन्यास धारण कर लिया गया था। हिन्दू धर्मावलम्बियों के अनुसार लोग स्वर्ग–नरक तथा पाप–पुण्य में विश्वास रखते थे। शुंगकाल में वैदिक या ब्राह्मण धर्म को हिन्दूधर्म के साथ जोड़ा गया।[25] इस आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि वैदिक धर्म (ब्राह्मण धर्म) अपने अतीत गौरव को पुनः प्राप्त करने लगा।

पुराणः परंपरानुसार पुराण पांच चीजों की व्याख्या करते हैं–

(i) विश्व की रचना;

(ii) इसका ध्वंस तथा पुनर्सृजन;

(iii) देवताओं तथा मान्य पुरुषों की वंशावलियां;

(iv) मन्वंतरों अर्थात मनु की विभिन्न शासन अवधियां; एवं

(v) सूर्य तथा चंद्र राजवंशों का इतिहास।

यद्यपि कई आख्यान काफी प्राचीन हैं, परंतु 18 पुराणों में से एक भी शुंगकाल से पूर्व का नहीं है। 18 पुराण हैं– विष्णु, अग्नि, भविष्य, भागवत, नारदीय, गरुड़ पद्म, वराह, मत्स्य, कूर्म, लिंग, शिव, स्कंद ब्रह्म, ब्रह्मांड, ब्रह्मवैवर्त, मार्कडेय तथा वामन। कुछ श्रेणियों में वायु को अग्नि पुराण की जगह तथा अन्य में शिव पुराण की जगह माना गया है।[26] संभवतः वायु पुराण प्राचीनतम है, कुछ अन्य 15वीं–16वीं सदी तक लिखे जाते रह है, परंतु लगभग सभी का बारंबार लेखन तथा सुधार हुआ। पुराणों ने निरक्षरों तथा शिक्षा से वंचित नारियों के लिए उपनिषदीय शिक्षाओं का प्रचार करने में महान सहायता की।[27]

सन्दर्भ सूची–

1. डॉ. के.पी. जायसवाल, हिन्दू पॉलिटी, पृ. 21
भरद्वाजा शुगाः कृतः शौशिरयः। –आश्वलायन श्रौतसूत्र, 12.13.5
2. वी.डी. महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ. 294
3. ईश्वरी प्रसाद, शैलेन्द्र शर्मा, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 433
4. पूर्वोक्त, पृ. 866
5. वी.डी. महाजन, पूर्वोक्त, पृ. 205
6. कालिदास, मालविकाग्निमित्रम्
7. वी.डी. महाजन, पूर्वोक्त, पृ. 238–39
8. पूर्वोक्त, पृ. 204–205
9. पूर्वोक्त
10. वरदाचार्य, संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ. 66–67
11. रामायण, भाग–10
12. त्रिभिर्वपः सदोत्थायी कृष्णद्वैपायनो मुनिः।
महाभारतमाख्यानं कृतवानिदमुत्तमम।। –आदिपर्व, 56.52
13. डॉ. आर.के. जायसवाल, प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारक, पृ. 37
14. महाभारत में 18 पर्व हैं– (1) आदिपर्व, (2) सभापर्व, (3) वनपर्व, (4) विराटपर्व, (5) उद्योग पर्व, (6) भीष्म पर्व, (7) द्रोणपर्व, (8) कर्णपर्व, (9) शल्यपर्व, (10) सौप्तिकपर्व, (11) स्त्रीपर्व, (12) शान्तिपर्व, (13) अनुशासनपर्व, (14) अश्वमेधपर्व, (15) आश्रमवासीपर्व, (16) मौसलपर्व, (17) महाप्रस्थानिक पर्व, (18) स्वर्गारोहणपर्व
15. ईश्वरीप्रसाद, शैलेन्द्र शर्मा, पूर्वोक्त, पृ. 444–45
16. अदौ कृतयुगे वर्णो नृणं हंस इति स्मृतः। –भागवत, 11.17.10
17. ऋग्वेद, 1.75.7
18. पूर्वोक्त, 9.12.3
19. चातुर्वर्ण्य मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्धूयकर्तारमध्ययम्।। –गीता, 413
20. सत्याभिमध्यायिनः पूर्व सिसृक्षोब्राह्मणो जगत्।
अजायन्त द्विजश्रेष्ठ सत्वोद्रिकता मुखा–प्रजा।।
वक्षसो रजसोद्रिक्तास्तया वै ब्रह्मणोऽभवन्।
रजसा तमसा चैव समुद्रित्तास्तथोरूतः।।–विष्णुपुराण, 1.6.3.5

21. ऋग्वेद, 1.126.8
22. बाणभट्ट, हर्षचरित, पृ. 18
23. जयशंकर मिश्र, ग्यारहवीं शदी का भारत, पृ. 102
24. पतंजलि, महाभाष्य, 4.1.49
25. शतपथ ब्राह्मण, 11.5.7.1
26. ईश्वरीप्रसाद, शैलेन्द्र शर्मा, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 446
27. मनुस्मृति, 3.232; महाभारत, 18.6.95

●